**ओ३म्**

**‘आज के समय में सच्चे लक्षणों वाला गुरु मिलना कठिन व असम्भव’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

भारत की धर्म व संस्कृति वेदों पर आधारित रही है। वेद सबसे पुराने होने से प्राचीनतम ज्ञान-विज्ञान व धर्म-कर्म के ग्रन्थ हैं। अन्य सभी ग्रन्थ कुछ प्राचीन व अधिकांश अर्वाचीन है। वेदों के बाद प्राचीनता की दृष्टि से 4 ब्राह्मण ग्रन्थों का स्थान है। इनके बाद मनुस्मृति, उपनिषद व दर्शन ग्रन्थों एवं अन्यान्य आरण्यक व गृह्यसूत्र आदि ग्रन्थों की गणना की जा सकती है। बाल्मिकी रामायण एवं महाभारत यद्यपि इतिहास के ग्रन्थ हैं परन्तु प्रसंगानुसार इनमें यत्र-तत्र धर्माधर्म आदि की चर्चा भी मिल जाती है। प्राचीन ग्रन्थों में ही हम आयुर्वेद के चरक व सुश्रुत एवं खगोल ज्योतिष के सूर्य सिद्धान्त आदि ग्रन्थों को भी ले सकते हैं। यह सब मिलकर वैदिक साहित्य बनता है जिसका वेदानुकूल भाग ही हमारे लिए ग्राह्य है एवं वेद विरुद्ध भाग त्याज्य है। महाभारत काल के बाद ज्ञान का सूर्य विदीर्ण हो गया जिस कारण अनेक अविद्यायुक्त ग्रन्थों का प्रणयन अनेक विद्वानों ने किया जिसमें हम सभी पुराणों व बौद्ध, जैन मत आदि के ग्रन्थों को ले सकते हैं। इन पुराणों एवं बौद्ध-जैन व वाममार्ग आदि ग्रन्थों का उल्लेख व इनमें निहित मत व मान्यताओं की नीर-क्षीर विवेचना व समीक्षा हम ऋषि दयानन्दकृत सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें व बारहवें समुल्लास में देख सकते हैं। हम जानते हैं शुद्ध वायु और शुद्ध जल हमारे स्वास्थ्य के हितकर वह अशुद्ध व प्रदुषित वायु व जल हमारे लिए अहितकर होता है। इसी प्रकार से शुद्ध ज्ञान व विद्या हमारे जीवन में अमृत के समान है और अज्ञान व अविद्या हमारे लिए सदैव अहितकर व हानिकर होती है। विद्या की प्राप्ति से ही मनुष्य में विवेक उत्पन्न होता है और इस विवेक से ही अविद्या व विद्या का ज्ञान होता है। एक साधारण व्यक्ति अपनी अल्प बुद्धि से बिना किसी सच्चे गुरु व सद्ग्रन्थ के विद्या और अविद्या, सत्य और असत्य अथवा धर्म और अधर्म का निर्णय नहीं कर सकता। सत्यासत्य, धर्माधर्म और विद्या-अविद्या को जानने का हमारे पास एक ही सरलतम उपाय है और वह है ऋषि दयानन्द सरस्वती के वैदिक ज्ञान-विज्ञान से युक्त ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन। इसके अतिरिक्त ऋषि दयानन्द के एक लघु ग्रन्थ व्यवहार भानु से भी सच्चे गुरु व विद्या-अविद्या आदि विषयों पर प्रकाश पड़ता है। आज गुरु-पूर्णिमा के पर्व के अवसर पर हम व्यवहार-भानु पुस्तक से **“गुरु”** से संबंधित कुछ मुख्य मुख्य बातें प्रस्तुत कर रहे हैं।

 व्यवहारभानु ग्रन्थ क आरम्भ में ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि **ऐसा कौन मनुष्य होगा कि जो सुखों को सिद्ध करनेवाले व्यवहारों को छोड़कर उलटा आचरण करे। क्या यथायोग्य व्यवहार किये बिना किसी को सर्वसुख हो सकता है? क्या काई मनुष्य है जो अपनी और अपने पुत्रादि सम्बन्धियों की उन्नति न चाहता हो? इसलिए सब मनुष्यों को उचित है कि श्रेष्ठ शिक्षा और धर्मयुक्त व्यवहारों से वत्र्तकर सुखी होके दुःखों का विनाश करें। क्या कोई मनुष्य अच्छी शिक्षा से धर्मार्थ, काम और मोक्ष फलों को सिद्ध नहीं कर सकता और इसके विना पशु के समान होकर दुःखी नहीं रहता है? इसलिए सब मनुष्यों को (वेदों के ज्ञान से पूर्ण गुरु की) सुशिक्षा से युक्त होना आवश्यक है।**

 यदि हम गुरु शब्द पर विचार करें तो हमें दो प्रकार के गुरु प्रतीत होते हैं एक गुरु वह हैं जो हमें स्कूल, पाठशालाओं, गुरुकुलों, विद्यालयों व महाविद्यालयों में अध्ययन व अध्यापन व शोध आदि कार्य कराते हैं। दूसरे गुरु वह है जो हमें आचार-व्यवहार सहित सम्पूर्ण धर्म-कर्म की शिक्षा देते हैं। ऋषि दयानन्द ने व्यवहारभानु पुस्तक में गुरुओं के विषय में प्रश्न उठाते हुए कहा कि **कैसे गुरु अर्थात् पुरुष पढ़ाने और शिक्षा देने वाले होने चाहिएं?** इसका उत्तर देते हुए वह एक श्लोक प्रस्तुत करते हैं। श्लोक है **‘आत्मज्ञानं समारम्भस्तितिक्षा धर्मनित्यता यमर्था नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते।।’** इसका अर्थ है कि **हमारे विद्यालयों के गुरु ऐसे हों जिनको परमात्मा और जीवात्मा का यथार्थ ज्ञान, जो आलस्य को छोड़कर सदा उद्योगी, सुखदुःखादि का सहन, धर्म का नित्य सेवन करनेवाला, जिसको कोई पदार्थ धर्म से छुड़ाकर अधर्म की ओर न खेंच सके, वह पण्डित (गुरु वा आचार्य) कहाता है। इसके बाद वह कुछ श्लोक प्रस्तुत कर बताते हैं कि वह गुरु व आचार्य सदा प्रशस्त, धर्मयुक्त कर्मों का करने और निन्दित-अधर्मयुक्त कर्मों को कभी न सेवनेहारा, जो ईश्वर, वेद और धर्म का किसी भी स्थिति में विरोधी न हो और परमात्मा, सत्यविद्या और धर्म में दृढ़ विश्वासी है, वही मनुष्य पण्डित (गुरु वा आचार्य) के लक्षणयुक्त होता है। गुरु वा पण्डित की बुद्धिमत्ता का लक्षण बताते हुए ऋषि दयानन्द कहते है जो वेदादि शास्त्र और दूसरे के कहे अभिप्रायः को शीघ्र ही जानने, दीर्घकालपर्यन्त वेदादि शास्त्र और धार्मिक विद्वानों के वचनों को ध्यान देकर सुनके ठीक-ठीक समझकर निरभिमानी शान्त होकर दूसरों से प्रत्युत्तर करने, परमेश्वर से लेके पृथिवीपर्यन्त पदार्थों को जान के उनसे उपकार लेने में तन, मन, धन से प्रवत्र्तमान होकर काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादि दुष्ट गुणों से पृथक वत्र्तमान, किसी के पूछे विना वा दो व्यक्तियों के संवाद में विना प्रसंग के अयुक्त भाषणादि व्यवहार न करनेवाला है।**

 **गुरु आचार्य व पण्डित वह मनुष्य होता है जो प्राप्त होने के अयोग्य पदार्थों की कभी इच्छा नहीं करते, किसी पदार्थ के अदृष्ट वा नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर शोक नहीं करते और बड़े-बड़े दुःखों से युक्त व्यवहारों की प्राप्ति में भी मूढ़ होकर नहीं घबराते हैं। सच्चे गुरु की वाणी सब विद्याओं में चलनेवाली, अत्यन्त अद्भुत विद्याओं की कथाओं को करने, न जाने हुए पदार्थों को तर्क से शीघ्र जानने-जनाने, सुनी-विचारी विद्याओं को सदा उपस्थित रखने वाली होती है। गुरु सब विद्याओं के ग्रन्थों को अन्य मनुष्यों को शीघ्र पढ़ानेवाला मनुष्य होता है। गुरु व आचार्य की सुनी हुई और पठित विद्या अपनी बुद्धि के सदा अनुकूल और बुद्धि और क्रिया सुनी-पढ़ी विद्याओं के अनुसार, जो धार्मिक, श्रेष्ठ पुरुषों की मर्यादा का रक्षक और दुष्ट डाकुओं की रीति को विदीर्ण करनेहारा मनुष्य है। ऐसा गुरु ही विद्वान व पण्डित कहलाने का अधिकारी होता है। गुरु व पण्डित के गुणों व लक्षणों का वर्णन करने के बाद ऋषि दयानन्द लिखते हैं जहां ऐसे सत्पुरुष पढ़ाने और बुद्धिमान पढ़नेवाले होते हैं वहां विद्या, धर्म की वृद्धि होकर सदा आनन्द ही बढ़ता जाता है और जहां मूढ़ वा मूर्ख तथा पण्डित के लक्षणों के विपरीत पढ़ने व पढ़ाने वाले होते हैं वहां अविद्या व अधर्म की वृद्धि होकर दुःख बढ़ता ही जाता है। हमें लगता है कि आज की अधिकांश व कुछ स्थिति ऐसी ही है। ऋषि दयानन्द के गुरु के स्वरुप व लक्षणों में सभी प्रकार के गुरु सम्मिलित हैं।**

 आज हम देखते हैं कि हमारे विद्यालय और महाविद्यालय के गुरुओं व आचार्यों में यथार्थ अध्यात्म का ज्ञान व तदनुरुप साधना का सर्वथा अभाव है जिस कारण हमारे विद्यार्थी व युवापीढ़ी भी आध्यात्मिक व नैतिक मूल्यों में कोरे व ईश्वर व जीवात्मा के यथार्थ स्वरुप व उसके ज्ञान से अपरिचित व दूर हैं। इन विद्यालय के गुरुओं के इतर हमारे जो धार्मिक गुरु हैं वह भी अविद्या से ग्रस्त दिखाई देते हैं जिनका उद्देश्य अपने अन्धभक्तों की संख्या बढ़ाना और उनसे अधिकाधिक धन लेकर अपने भवनों व सुख-सुविधाओं का साम्राज्य खड़ा करना है। हमें अपने समुदाय में ऐसे गुरु प्रायः दिखाई नहीं देते जो अज्ञान व अन्धविश्वासों से लोगों को पृथक कर उनका सुधार करें। कोई धार्मिक गुरु अज्ञानपूर्ण अवैदिक कृत्यों को छुड़ाकर सुधार करने का कार्य करता नहीं दिखता। पहली बात तो उनको इन अवद्याजनित अन्धविश्वासों व मिथ्या कृत्यों का ज्ञान ही नहीं है और यदि हो तो भी वह ऐसा इस लिए नहीं करते क्योंकि यह उनकी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति में बाधक हैं। आम जनता इसको समझती नहीं है। वह उनकी वेशभूषा और छद्मयुक्त वाणी पर ही ध्यान देती है। हम देखते हैं कि प्रायः सभी गुरु घोर अविद्याजन्य वेदविरुद्ध अतार्किक मूर्तिपूजा, व्यक्तिपूजा, अवतारवाद, जन्मना जातिवाद, भेदभाव, फलित ज्योतिष, मिथ्या कर्मकाण्ड के पोषक हैं और ईश्वर के ज्ञान वेद से प्रायः सर्वथा दूर हैं। हम इन्हें यथार्थ गुरु व विद्वान नहीं कह सकते। यह हमें ढ़ोगी व पाखण्डी लगते हैं जिनसे भोलीभाली जनता को बचाना चाहिये परन्तु जनता में विवेक व सद्बुद्धि न होने के कारण वह इन पाखण्डियों के जाल में फंस कर अपना स्वर्णिम व पारससम जीवन नष्ट कर लेती है। हम अनुभव करते हैं कि संसार के सभी मनुष्यों का कल्याण तब होगा जब वह ईश्वरीय ज्ञान वेदों की शरण में आकर उसको जान व समझकर उसके अनुरुप आचरण व व्यवहार करेंगे। वेदों व धर्म का ज्ञान रखने वाले मनुष्यों का कर्तव्य होता है कि वह अज्ञानियों को सच्चा रास्ता दिखायें। इसी कर्तव्य भावना से हमने यह विचार प्रस्तुत किये हैं। ईश्वर लोगों के हृदय में सत्य ज्ञान की ज्योति को प्रदीप्त करे जिससे सभी लोग विवेकी बनकर मिथ्या ज्ञान व गुरुओं के मार्ग को छोड़कर सच्चे वेदमार्ग का अनुसरण करें। इसी के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**